ISSN : 2582 2802
A Refereed and Peer - Reviewed International e-Journal of Humanities and Social Sciences
by School of Humanities and Social Sciences
Dr. Babasaheb Ambedkar Open University, Ahmedabad

आत्मकथा में 'मैंने मांडू नहीं देखा' में स्त्री स्वर और मनोविज्ञान

वीनू
हिंदी अध्ययन केन्द्र
गुजरात केन्द्रीय विश्वविद्यालय, गांधीनगर, गुजरात
इमेल – veenu3420@gmail.com

शोध सार – स्वदेश दीपक की आत्मकथा 'मैंने मांडू नहीं देखा' मनुष्य के मनोविज्ञान की शोधपरक थाती है। मनुष्य जीवन के उतार-चढ़ाव और कठिनाई भरे जीवन की वर्तमान त्रासदी यह है कि कब और किस प्रकार से अवसाद मन और मस्तिष्क को अपनी चपेट में ले लेता है, इसका भान भी नहीं होने पता । इस आत्मकथा में बाइपोलर की समस्या का स्वयं इस पीड़ा से ग्रसित लेखक ने बड़े ही तटस्थ भाव से विवेचन एवं विश्लेषण किया है । आत्मकथा में मनोविकारों, संबंधों की गर्माहट से लेकर टूटन, वेदना, पीड़ा और उत्पीडन को मानसिक समस्याओं से जोडकर दिखाया गया है । मनोरोग विशेषज्ञों द्वारा इस पुस्तक को एक महत्वपूर्ण दस्तावेज बताया गया है ।

बीज शब्द – मायाविनी, दुर्भाग्यपूर्ण, भयावहता, आकुलाहट, भयभीत, मनोरोग अवसाद, मांडू, सिडक्ट्रेस आदि ।

भूमिका –

स्वदेश दीपक की आत्मकथा 'मैंने मांडू नहीं देखा' मनुष्य के मनोविज्ञान की शोधपरक थाती है। मनुष्य जीवन के उतार-चढ़ाव और कठिनाई भरे जीवन की वर्तमान त्रासदी यह है कि कब और किस प्रकार से अवसाद मन और मस्तिष्क को अपनी चपेट में ले लेता है, इसका भान भी नहीं होने पता । इस आत्मकथा में बाइपोलर की समस्या का स्वयं इस पीड़ा से ग्रसित लेखक ने बड़े ही तटस्थ भाव से विवेचन एवं विश्लेषण किया है । आत्मकथा में मनोविकारों, संबंधों की गर्माहट से लेकर टूटन, वेदना, पीड़ा और उत्पीडन को मानसिक समस्याओं से जोडकर दिखाया गया है । मनोरोग विशेषज्ञों द्वारा इस पुस्तक को एक महत्वपूर्ण दस्तावेज बताया गया है । स्वदेश दीपक ने हिंदी साहित्य की लगभग प्रत्येक विधा में लेखनी चलाते हुए मायापोत, नंबर 57 स्क्वाड्रन, अश्वारोही, मातम, तमाशा, बाल भगवान, किसी अप्रिय घटना का समाचार नहीं, मसखरे कभी नहीं रोते, प्रतिनिधि कहानियाँ, निर्वाचित कहानियाँ, कोर्ट मार्शल, जलता हुआ रथ, काल कोठारी, सबसे उदास कविता आदि कालजयी रचनाएं दी हैं जो न केवल अपने समय के समाज की लोकप्रिय कृतियाँ रही हैं वरन् वर्तमान समय और भविष्य में भी हिंदी साहित्य में अपना एक अलग मुकाम निश्चित कर चुकी हैं ।

मूल आलेख –

स्वदेश दीपक अपनी रचनाओं के माध्यम से अपने समय और समाज की कहानियां कहते-कहते न जाने कब मानसिक अवसाद से ग्रस्त हो गए, इसका भान स्वयं उन्हें भी नहीं हो सका था । सन् 1991 से 1997 तक बाहरी दुनिया से कटे रहने वाला यह साहित्यकार अपने भीतरी संसार में विचरण करता हुआ पीजीआई, चंडीगढ़, पंजाब के अस्पताल जीवन की जंग लड़ता रहा । इस कठिन समय की भयावहता को वे अपनी संस्मरणात्मक आत्मकथा 'मैंने मांडू नहीं देखा' में बड़े ही तटस्थ भाव से सिलसिलेवार ढंग से कहते हुए चलते हैं । अवसाद की स्थिति में तीन बार आत्महत्या का प्रयास कर चुके लेखक अपने परिवार और शुभचिंतकों की उन्हें जिलाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका का विस्तृत लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हैं । किन्तु यह जीवन की सच्चाई है कि समय के साथ संबंधों में पड़ी दरार, निर्जीवता केवल विनाश ही करती है । इसमें भी यदि ये सम्बन्ध भयंकर मानसिक अवसाद से गुजर रहे व्यक्ति से जुड़े हों । लेखक की पत्नी गीता, मित्र विकास नारायण और शिला संधू उन्हें सात साल तक मौत के मुंह से बचा लाने के सभी प्रयास करते हैं । इस सम्बन्ध में वे लिखते हैं कि - **और चाहने वाले भी ,दोस्त भी- जब पता चल जाए कि रोग असाध्य है तो सब साथ छोड़ देते हैं"। केवल दो लोग खाई के मुँह पर खड़े रहे मेरी पत्नी गीता और मेरे दोस्त विकासनारायण राय-। लेकिन बाहर निकलने के लिए पहली छलाँग तो मुझे लगानी थी । नहीं लगाई यह छलाँग सात वर्ष और नहीं आया बाहर ,। मैं तेजाब की नदी में तैर रहा था । लगा दी एक दिन मैंने एक छोटीसी छलाँग और पकड़ कर खींच लिया बाहर मुझे - और विकास ने गीता। ले आए घर चंडीगढ़ के बहुत बड़े अस्पताल से । वह अस्पताल जहाँ के डॉक्टर आकाश से उतर आए देवता थे और नर्सें फ्लोरेन्स नाइटेंगेल ।"**[1] यह कैसा मनोविकार है जिसकी अंतहीन प्रतीत होती गहरे से निकलने की अकुलाहट तो है मन के किसी कोने में..किन्तु इस दिशा में प्रयास करने से भी रोगी भयाक्रांत हो जाता है । किन्तु अस्पताल से घर आ जाने के बाद लेखक द्वारा नौकरी छोड़ देने के निर्णय और दो बच्चों की परवरिश, घर एवं लेखक को सँभालने की जिम्मेदारी जब अकेले उनकी पत्नी पर आ जाती है, उस समय पत्नी का वह प्रेम घृणा में परिवर्तित होता हुआ प्रतीत होता है जब वे अपने बेटे संवाद करते हुए लेखक को बीच सड़क पर अकेले छोड़ आने और ट्रक से टक्कर होकर उनकी हत्या की संभावित योजना और उन पर किसी भी प्रकार के सामाजिक संदेह से बचने की युक्ति के सन्दर्भ आते हैं । आत्मदाह के प्रयास के कारण 40 प्रतिशत झुलस जाने से लेखक को अस्पताल में पांच दिन तक होश नहीं आया था, तब यही पत्नी पांच रातों तक बिना पलक झपकाए रात-दिन उनकी सेवा करती रही थीं, इसी पुरुष के लिए सगे-सम्बन्धियों और समाज से लड़कर उन्होंने प्रेम विवाह किया था । यही जीवन का कटु सत्य है ।

स्वदेश दीपक को याद करते हुए उनके लापता हो जाने के बाद उनके मित्रों, परिचितों एवं उनके पाठकों ने अपनी-अपनी तहर से उन्हें और उनके साहित्य को याद किया है । इस कड़ी में अदिति भारद्वाज लिखती हैं कि **-"एक सर्जक के मन की पीड़ाएं उसकी सर्जना के लिए माध्यम बनती हैं पर स्वयं सर्जक भी स्पष्ट रूप से नहीं समझ पाते कि उनकी मानसिक व्याधियों से उनकी कला का वह रूप संभव हो सका है, या अशांत मन के विकारों ने उनकी कला को सीमित किया. स्वदेश दीपक भी अपने मन की प्रेत-छायाओं से लड़ते रहे और अंततः जब लड़ने से थक गए तो अपने आस-पास की दुनिया को छोड़कर एक सुबह कहीं चले गए.."**[2] जो स्वयं सृजनकर्ता है और नित नई कहानियों को साहित्यिक विधाओं का रूप देकर पाठकों को रोमांचित करता है, वही ऐसे रोग से पीड़ित हो जाता है जिसे वह साध पाने में असमर्थ हो जाता है और एक दिन प्रभात भ्रमण के लिए निकला हिंदी का वही प्रसिद्ध लेखक दिल्ली की सड़कों पर ऐसा गम हुआ कि लाख कोशिशों के बावजूद भी उनकी कोई सूचना भी न मिल सकी ।

मानसिक विकार रोगी को न केवल मन से ही झकझोर देता है अपितु शारीरिक व्याधियों के जन्म का भी कारण बनकर उभर आता है। अपने गो-वेंट-गोन के किस्से आत्मकथा के माध्यम से साझा करते हुए लेखक अपने प्रिय और अकरीबी रहे लोगों की चर्चा करते हुए लिखते हैं कि -**"अकेली शीला जी मेरे पिछले सात साल के बनवास के बारे में सब कुछ जानती हैं। सबसे छिपाकर भी रखा। गीता की उनसे कोई गुप्त संधि थी। वह शीला जी को मेरे गो वेन्ट गॉन की मंजिलें बता चुकी थी ,। उन्होंने किसी को भी मुझे देखने आने नहीं दिया क्योंकि वैल विशर्ज़ से मुझे नफरत थी। उन्हें देखते ही मैं खाई के निपट अँधेरेवाले हिस्से में सरक जाता था।"**[3] लेखक के जीवन में महिलाओं की विशेष भूमिका का जिक्र वे बार-बार करते हैं, फिर चाहे वे उनकी पत्नी गीता हों, शीला संधू, कृष्णा सोबती या फिर मायाविनी हो। शीला संधू जो एक बड़े प्रकाशन घर की संपादिका थीं, वे लेखक के अज्ञातवास और मानसिक उद्विलन की स्थितियों के मध्य सामंजस्य स्थापित करने के सभी प्रयास कतरती हैं और अपने मित्र को अन्य किसी प्रकार के आघात से बचाने के उनकी पत्नी के प्रयासों में सहयोगी की भूमिका का निर्वहन करती हुई दिखाई देती हैं।

अदिति भारद्वाज अपने एक लेख में स्वदेश दीपक के३ आत्मनिर्वासन और आत्मकथा लेखन के विषय में कहती हैं कि - **"स्वदेश दीपक की 'मैंने मांडू नहीं देखा' पढ़ने के बाद सहसा यह विश्वास नहीं होता कि सात साल (1991-1997) तक दुनिया से नहीं बल्कि स्वयं से भी आत्मनिर्वासित व्यक्तित्व इस प्रकार की रचना लिख सकता है. एक लेखक के रूप में अपनी खोई हुई शक्तियों को प्राप्त करने की प्रक्रिया और उस प्रक्रिया की सुखद परिणति -यह किताब-सर्जक व्यक्तित्व की वापसी का विरल उदाहरण है."**[4] लेखिका का यह कहना बिल्कुल सही है किन्तु इस पुस्तक के अस्तित्व में आने और लिखे जाने के बाद के समय की वास्तविकता भी बहुत अधिक भिन्न नहीं थी। वे पूरी तरह ठीक नहीं हुए थे, उन्हें पुन: लिखने की प्रेरणा भी कल्पना लोक की एक स्त्री द्वारा ही प्राप्त हुई थी। वास्तव में मनोरोग की स्थिति में लेखक ने अपने मन-मस्तिष्क पर स्वयं ऐसी बेड़ियों का निर्माण कर लिया था जिनके निवारण में कल्पना जगत में तलाशते हुए ठीक उसी बिंदु पर पहुँचते थे, जिन्हें वे स्वयं गढ़ रहे थे।

अपनी उलझनों को, आत्मपीड़ाओं को वास्तविक जीवन के लोगों से साझा करने का विशवास खो चुके लेखक नितांत अकेले होने पर कल्पना लोक में विचरण करती स्त्री का जिक्र बार-बार करते हुए ऐसा आभास कराते हैं कि वे उसी महिला द्वारा संचालित हो रहे हैं। वे लिखते हैं कि - **: मेरे पास कुर्सी पर घोषणा की थी इसने" 'आपकी अब मृत्यु नहीं होगी।तीन प्रयास-कहाँ मानी कभी भी किसी की बात ', तीन बार कोशिश। नहीं हुई एक्सीडैंटल डैथ। तीनों कोशिशें प्राणहार कोशिशें नहीं थीं। क्यों नहीं मानता मैं मायाविनी की बात ? इसलिए कि अभी मुझमें लड़ने की ताकत बाकी थी। इसलिए कि पत्नी गीता एक दुर्ग में बदल गई। मैं देखने आनेवालों से नहीं मिलना चाहता था। उसने देखने आनेवालों को मेरे कमरे में आने से रोक दिया। सहमे हुए घर में सहमे हुए लोग। लेकिन कभी तोप बन जाता है-कभी एक तिनका भी बोफोर्स-। लाम लगे पाँच वर्ष हो चले थे। गीता मेरे कंधे से कंधा मिला युद्धरत।"**[5] लेखक द्वारा कही गई इस बात से स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्तियों से भरोसा उठ जाने की स्थिति में लेखक ने तीन बार न केवल आत्महत्या का प्रयास किया बल्कि जीवन से पलायन के उन्हें वे सभी तरीके आजमाए जिनके माध्यम से वे मुक्ति प्राप्त कर सकें संसार से, मायाविनी के मायाजाल से। किन्तु लेखक की सृजन शक्ति की उपज उस मायाविनी को ही वे अपनी तारणहार के रूप में भी देखते हैं। वहीं दूसरी ओर उनकी पत्नी गीता द्वारा मानसिक उद्विग्नता से पति को निकालने के लिए वे सभी प्रयास किये जाते हैं जिनकी उस समय नितांत आवश्यकता थी।

यह गौरतलब है कि लेखक दो प्रकार के व्यक्तित्वों को जी रहे थे। एक वास्तविक जीवन का वह स्वदेश दीपक जो चंडीगढ़ विश्वविद्यालय में अंग्रेजी का प्रोफ़ेसर था और दूसरा वह जो अपने कल्पना लोक में जीता था। लेखक पाश्चात्य लेखिका वुल्फ और सिल्विया प्लाथ से बहुत प्रभावित थे। उनका जिक्र वे आत्मकथा में बहुत बार तब करते हैं जब अस्पताल में मनोरोग की आक्रामक दशा में वे वास्तविक जीवन अलग व्यवहार कर रहे होते हैं। इस सम्बन्ध में अदिति भारद्वाज लिखती हैं कि **"वुल्फ जो स्वयं व्यक्तित्व के दो अतिवादी रूपों से ताउम्र जूझती रहीं (जिसे आधुनिक विज्ञान ने बाइपोलैरिटी का नाम दिया) अंतत: आत्महत्या से ही शांति प्राप्त करती हैं. सिल्विया प्लाथ, जिन्हें अंग्रेज़ी कविता के आधुनिक स्तंभों में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त है, अपने 30 वर्ष के अल्प जीवन में मनोअवसाद (डिप्रेशन) का शिकार रहीं और आत्मघात की कई असफल कोशिशों के बाद अंततः स्वयं अपनी जिंदगी ख़त्म कर ली."**[6] इसी मानसिक अवसाद से ग्रसित लेखक भी दो प्रकार के व्यक्तित्वों को जी रहे थे। इसी प्रकार सात साल अस्पताल में बिताने के बाद डॉक्टर से सहज हो जाने पर लेखक उनसे अपनी मन:स्थिति साझा करते हैं और पत्नी के त्याग और समर्पण के सम्बन्ध में कहते हैं कि - **ठीक : मैं"। मेरी बहुत केयर कर रही हैं। वज़न पाँच किलो बढ़ गया।**

डॉ बताया था आपको : शरण .। बहुत सोच लेते हैं। शी स्टुड लाइक ए राक विद यू। इस बीमारी में पढ़ी-पति को छोड़ देती हैं :लिखी औरतें प्राय।"[7] यह जीवन की वास्तविकता है। पति को मौत के मुंह से बचा लाने वाली पढ़ी-लिखी, नौकरीपेशा और समझदार पत्नी गीता ने स्वयं समर्पित करते हुए लेखक को ठीक करने के हरसंभव प्रयास किये। छोटे बच्चे का जिस प्रकार ख्याल रखा जाता है ठीक उसी प्रकार पति का ख्याल गीता जी ने सात वर्ष से अधिक समय तक रहा। वे लेखक को जीवटता और जीवन के करीब लाने के उपाय करती हैं और मनोरोग से परेशान पति से संवाद करते हुए कहती हैं कि -**आज फेस इतना पीला क्यों है"? डरो मत। मैं तुम्हें कुछ नहीं होने दूँगी।**

यैस-। यू आर दुर्गा। माई प्रोटेक्टिंग गॉडेस।"[8] लेखक की पत्नी के यह शब्द असाध्य रोग को भी सह लेने और उससे उबरने असीम शक्ति प्रदान करते हैं। इसलिए लेखक उन्हें दुर्गा और प्रोटेक्टिंग गॉडेस कह कर संबोधित करते हैं।

कल्पना लोक में विचरण करने वाली स्त्री मायाविनी के वे अपने राजदार के रूप में देखते हैं और उसके हवाले से लिखते हैं कि **शायद आप जानते नहीं थे"-। स्वदेश जी, आप मेरे कल्पना पुरुष हैं-। सदियों से खो गए मेरे पुरुष। प्राप्त तो करना है। आप मर नहीं सकते। डॉक्टर गलत हैं। बरसों बाद आप मिले। मरने नहीं दूँगी।**

मैं बोल नहीं सकता। समझ भी नहीं सकता। लेकिन मेरी मायाविनी सब समझती।"[9] इन पंक्तियों को पढ़कर ऐसा अनुभव होता है जैसे ये सभी शब्द लेखक अपने लिए किसी स्त्री से सुनना चाहते थे वास्तविक जीवन में, किन्तु ऐसा संभव न होने की दशा में वे ये शब्द मायाविनी से कहलवाते हैं।

पत्नी गीता के स्नेह, प्रेम, ममत्व के साथ ही उसकी घृणा आदि का भी लेखक पूर्ण विवरण देते हैं। अस्पताल में पत्नी गीता के साथ चलते हुए सीढियों को देखकर उपजे भय और पत्नी साथ के सम्बन्ध में लिखते हुए वे कहते हैं कि - **नीचे उतरते सीढ़ियाँ ही सीढ़ियाँ"। गीता ने थाम रखा है, फिर भी अंदर भय ही भय। अगर फिसल गया...**

माथा पोंछ लो-।

कुर्ते की बाईं जेब टटोली । खाली ।

तुम्हारे पास तुम्हारा रूमाल कभी नहीं होता-।

इतनी साधारणसात साल लंबी सेवा नर्स भी ? क्या वह चुक रही है...सी बात कहते उसकी आवाज़ उदास- नहीं करती। धीरज कोई बाहर से नहीं मिलता । अंदर है, लगातार खर्च होता रहे तो खत्म क्या प्रभु जी के... यहाँ से काली किस्मत लिखा लाई है सब विरोधों के बावजूद शादी की !। मिला तो मैं । जब ठीक तो कठोर दर्प । अबतन से न !, न मन से किसी योग्य । डॉक्टर अवनीत ने कहा था मिस्टर दीपक :, यू आर लक्की टु हैव ए वाइफ विद सच स्ट्राँग वेल्यूज़ । इस बीमारी में औरतें अक्सर छोड़ जाती हैं ।"[10] इस आत्मकथा अपने मनोरोग से जूझते और लड़ते हुए केवल लेखक ही नहीं दिखाई देते हैं बल्कि सात साल की इस लम्बी अवधि में उनकी पत्नी भी मानसिक पीड़ा के दौर से गुजरी हैं । यह प्रेम का अटूट बंधन था, जिसके वशीभूत होकर पति को रोगमुक्त करने हेतु उन्होंने सालों-साल उन्हें छोटे बच्चे जैसी देखभाल दी । किन्तु उनका धैर्य भी आखिर कब तक टिका रह सकता था । पति की सेहत न के बराबर हो रहे सुधार से हताश होकर वे कहती हैं कि - **मैं हार गई"। थक गई । जब ठीक था तब वायलेंट । बीमार तब वायलेंट । मैं....**

बदमाश बच्चे को फेंक थोड़े देते हैं-। थोड़ी अतिरिक्त मेहनत करनी होती है ।

गीता की पनियाई आँखें देख मेरी नई मित्र वनलता सेन ने सलाह दी कि इन्हें रोने मत दो । बच्चों को पता चल गया तो सर्वनाश हो जाएगा । गीता जी घर की मुखिया पुरुष हैं-।"[11] यह वनलता सेन भी लेखक के कल्पना लोक की उपज है जो प्रेम और आसक्ति का प्रतिक बनकर नहीं अपितु सच्चे मित्र के रूप में निर्मित हुई है । बच्चों को पता चल जाएगा से अर्थ यह लगाया जा सकता है कि पति की पीड़ा से पत्नी के धैर्य का बांध टूट कर कहीं किसी और अनहोनी को जन्म न दे दे । इसलिए वन्लातासें उन्हें पत्नी को रोने न देने की सलाह देती है ।

सात साल तक कालकोठरी की सजा जैसे अनुभव से गुजरने वाले लेखक स्वयं को नितांत अकेला पते हैं इसलिए वे कहते हैं कि -**"बाहर निकल किसका हाथ पकडूंगा ।**

आप काहे को पकड़ेंगे किसी का हाथ-। मन करे तो अपना हाथ खुद पकड़ लें ।

कामना-, मैं रेगिस्तान बन गया हूँ । लिखूँगा कैसे ?

आपमें असीमित जीवनशक्ति है-। पहचानिए । स्वदेश, आप मरुस्थल में उद्यान बना सकते हैं ।"[12] लेखक अपने बंजर हो चुके लेखकीय जीवन एकाक़किपन की भयावह परिस्थितियों के पूर्वानुमान से ही सिहर उठते हैं और वास्तविक जीवन में पुन: परवेश से हिचकते हैं । वे अपने कल्पनालोक की स्त्री से अपने कष्ट, समस्या को साझा करते हुए समाधान पाते हैं ।

सात वर्ष पति की सेवा करने वाली गीता का भी धैर्य उस समय टूट जाता है जब घर आने के बाद न तो लेखक अपने बेटे को एक कक्रिता का अर्थ ही समझा पाते हैं बल्कि नौकरी छोड़ देने का निर्णय भी सुना देते हैं । सात वर्षों तक अकेले घर, नौकरी, बच्चे और पति का ख़याल रखते-रखते गीता जी का मन खिन्न होने लगा था ।

रिश्तों की गर्माहट अब ठंडी पड़ने लगी थी। इसलिए वे कहती हैं कि - **क्या किस्मत पाई है"। मैं काम करूँ, तुम ऐश ऐसा बेशर्म मर्द एक ही हो सकता है !। तुम महीना महीना नहाते नहीं थे-। बदबू मारते थे। मैं ही थी कि सेवा करती रही।**

मेरी वाली बीमारी के मरीज़ों का अपमान किया जाता है। कोई भी खैर नहीं मनाता।

पति जब कमाऊ न रहे तब फ़ालतू क्यों हो जाता है? पता नहीं।"[13] जो व्यक्ति किसी मानसिक व्याधि से पीड़ित हो, उसके साथ बहुत सतर्कता बरती जाती है। उसके पुन: स्वस्थ होने पर डॉक्टर यह सलाह देते हैं कि मरीज का पूरा ख्याल रखा जाए। एक छोटी बात भी उन्हें मानसिक आघात दे सकती है। ऐसे में लेखक की पत्नी द्वारा कहे गए ये अपशब्द लेखक के अंतर्मन को झकझोर देते हैं। गीता जी पति की जीवन के प्रति उदासीनता से इस प्रकार विचलित हो जाती हैं कि वे लेखक से कहती हैं -**तुम सचमुच मरना चाहते हो तो " . फिर22 की रायफल क्यों बेचीं? वुल्फ को समुद्र ने मुक्ति दिलाई। तुम्हें गीता दिलाती। अब और नहीं देख सकती तुम्हें इंच इंच मरता-। कौन ले गया तुम्हारी धजकहाँ गई तुम्हारी आँखों की ठंडी आग जिससे लोग ! नाउ अ फिज़ीकल क्रिप्पल ! बिंध जाते थे। यू मस्ट डाई। माई दीपक, मस्ट डाई। आई विल चेंज माई प्रेयर्स टू गॉड। तुम्हारे मरने की प्रार्थना करुँगी। मेरे होते दीपक किसी से भी दया की भीख नहीं मांग सकता। सुकान्त ने स्कूल दोस्तों से छिपाना शुरू कर दिया-। तुम उसके फादर नहीं रिलेटिव हो ,।"**[14] यह किसी भी पिता के लिए बहुत ही पीड़ादायक स्थिति है कि उसका बच्चा अपने ही पिता को दोस्तों के समक्ष रिश्तेदार के रूप में संबोधित करे। लेखक की जीवन न जीने की इच्छा से परेशान हो चुकी गीता अपने मन की पीड़ा को साझाकारते हुए लेखक के मरने की दुआ करने की बात कहती हैं।

सत्याग्रह में छपे अपने लेख में स्वदेश दीपक के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में अपना पक्ष रखते हुए कविता जी कहती हैं कि **-"हिंदी में अबतक कोई ऐसी किताब नहीं थी, जिसमें अपने ही मनोरोगों को तटस्थता और एक दूरी बरतते हुए कभी एक पात्र की तरह देखा जाए और कभी एक भुक्तभोगी की तरह. कथादेश में धारावाहिक रूप से 'खंडित जीवन के कोलाज' नाम से प्रकाशित होते वक्त ही ये संस्मरण अपने अनोखेपन की वजह से धूम मचा चुके थे. कई मनोरोग विशेषज्ञों ने तो इसे मानसिक रोगों के अध्ययन का जरूरी दस्तावेज भी माना."**[15] यह कथन पूर्णत: सत्य है कि लेखक तटस्थ होकर, एक दूसरे व्यक्ति की नज़र से अपने आत्म की कथा को स्वयं लिखते हुए पाठकों के साथ साझा किया है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से इस आत्मकथा का महत्व इस मनोरोग को समझने और सही समय पर उचित उपचारके प्रति सजगता एवं जागरूकता है। मानसिक अवसाद के वर्षों में लेखक दो प्रकार के व्यक्तित्वों को जीता रहा, जिनमें से एक वह व्यक्तित्व था जो मायाविनी नामक कल्पना की उपज से भयभीत भी रहता है और उसके सानिध्य में रहना भी चाहता है। वह वास्तविक जीवन में जिन बातों को खुल कर लोगों से साझा नहीं कर सकता, वाही सब बातें मायाविनी से कल्पना लोक में करता है। यह बहुत ही भयावह स्थिति है। दूसरा व्यक्तित्व वह जो वास्तविक है, बाह्य जगत के प्राणियों से सम्बन्ध स्थापित करने वाला, प्रत्यक्षा। किन्तु विडंबना यह है कि इस मनोरोग का व्यक्ति बाह्य जगत के प्राणियों पर से विश्वास खो देता है। यही कारण है कि लेखक गहरी उदासी का शिकार होते-होते कब इस मनोरोग की चपेट में आ जाता है, स्वयं उसे भी इस बात का भान नहीं हो पता है। इस आत्मकथा का दुर्दांत लगभग वही रहा, जो लेखक के प्रिय पाश्चात्य लेखक एवं लेखिका का हुआ था। इसे पढ़कर लगता है कि लेखक आजीवन अपने प्रिय लेखक के

ही जीवन का अनुसरण करते रहे और उन्होंने यह सुनिश्चित कर लिया था अपने प्रति कि उनका अंतिम समय भी वही होना चाहिए जो उनके प्रिय लेखक का हुआ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. दीपक, स्वदेश, मैंने मांडू नहीं देखा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2003, प्रथम संस्करण-2003, पृष्ठ-2
2. अदिति भारद्वाज, स्वदेश दीपक: एक बहुत बड़े विस्तार में निपट अकेला..., द वायर, https://thewirehindi.com/222709/remembering-the-writer-swadesh-deepak/
3. वही, पृष्ठ-6
4. अदिति भारद्वाज, स्वदेश दीपक: एक बहुत बड़े विस्तार में निपट अकेला..., द वायर, https://thewirehindi.com/222709/remembering-the-writer-swadesh-deepak/
5. वही, पृष्ठ-19
6. अदिति भारद्वाज, स्वदेश दीपक: एक बहुत बड़े विस्तार में निपट अकेला..., द वायर, https://thewirehindi.com/222709/remembering-the-writer-swadesh-deepak/
7. वही, पृष्ठ-86
8. वही, पृष्ठ-95
9. वही, पृष्ठ-101
10. वही, पृष्ठ-198
11. वही, पृष्ठ-258
12. वही, पृष्ठ-309
13. वही, पृष्ठ-317
14. वही, पृष्ठ-253
15. कविता, कोई बता सकता है स्वदेश दीपक का पता?, https://satyagrah.scroll.in/article/101747/birth-anniversary-swadesh-deepak